प्रशिक्षण साहित्य सं0– 7

व्यवसायिक कृषि व उद्यम द्वारा अधिकतम लाभ

सत्यमेव जयते

Department of Science & Technology
Govt. of India

KRISHI VIGYAN KENDRA–II
KATIYA, SITAPUR

अन्तर्गत

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार
द्वारा उत्प्रेरित एवं वित पोषित परियोजना

"ग्रामीण महिला तकनीकी पार्क"

संचालन– कृषि विज्ञान केन्द्र–द्वितीय, कटिया, सीतापुर

श्वेत बटन मशरूम (खुम्ब) की खेती की प्रारम्भिक जानकारी

परिचय

देश में श्वेत बटन खुम्ब की एगेरिकस बाईसपोरस प्रजाति की खेती बड़े पैमाने पर की जा रही है। उत्पादन की दृष्टि से इस खुम्ब का विश्व में प्रथम स्थान है। देश के मैदानी एवं पहाड़ी भागों में श्वेत बटन खुम्ब को शरद ऋतु में उगाया जाता है क्योंकि इस ऋतु में तापमान कम तथा हवा में नमी अधिक होती है। इस खुम्ब के उत्पादन के लिए कवक जाल फैलाव के दौरान 22–25 डिग्री सेल्सियस तथा फलन के समय 14–18 डिग्री सेल्सियस तापमान की आवश्यकता होती है तथा 80–85 प्रतिशत नमी की जरूरत पड़ती है। शरद ऋतु के आरम्भ व अन्त तक इस तापमान व नमी को आसानी से बनाये रखा जा सकता है। अन्य फसलों के विपरीत खुम्ब को कमरों या झोपड़ियों में उगाया जाता है। जहाँ पर की उपरलिखित तापमान व आद्रता बनाई जा सके। खुम्ब उगाने की शुरूआत एक 10′×10′×12′ के कमरे से की जा सकती है खुम्ब की खेती करने का तरीका खाद्यान एवं बागवानी फसलों से बिल्कुल भिन्न है अतः इसकी खेती शुरू करने से पहले प्रशिक्षण लेना हितकर होता है फिर भी, प्रारम्भिक जानकारी देने के उद्देश्य से श्वेत बटन खुम्ब की खेती करने का विवरण निम्न प्रकार है:

श्वेत बटन खुम्ब उगाने का तरीका

आजकल वैज्ञानिकों के अथक प्रयासों के फलस्वरूप खुम्ब को कृत्रिम ढंग से तैयार की गई खाद (कम्पोस्ट) पर उगाया जा रहा है। श्वेत बटन खुम्ब उगाने के लिए खाद (कम्पोस्ट) तीन विधियों से तैयार की जाती है –'

1. छोटी विधि 2. लम्बी विधि 3. इंडोर विधि

छोटी और इंडोर विधि से खाद तैयार करने में समय कम लगता है लेकिन अधिक पूंजी व संसाधनों की आवश्यकता होती है। लघु स्तर पर खुम्ब उत्पादन करने के लिए लम्बी विधि से खाद तैयार की जा सकती है। अधिक उपज और बिमारीयों रहित खुम्ब उत्पादन के लिए छोटी और इंडोर विधि द्वारा बनाई गई खाद उपयुक्त होती है। लेकिन खुम्ब उत्पादन शुरू करने और प्रारंभिक ज्ञान हेतु लम्बी विधि से खाद बनाई जा सकती है। अतः यहाँ पर लम्बी विधि से कम्पोस्ट तैयार करने की विधि का ही विवरण दिया जा रहा है:

अ) लम्बी विधि से खाद (कम्पोस्ट) तैयार करना

खाद में प्रयुक्त सामग्रियाँ व उनकी मात्रांए निम्नलिखित हैः

सूत्र नं. 1

1	गेहूँ का भूसा	300 किलोग्राम
2	केल्शियम अमोनियम नाइट्रेट (कैन) खाद	9 किलोग्राम
3	यूरिया	4 किलोग्राम
4	म्यूरेट ऑफ पोटाश खाद	3 किलोग्राम
5	सुपर फास्फेट खाद	3 किलोग्राम
6	चोकर (गेहूँ का)	15 किलोग्राम
7	जिप्सम	20 किलोग्राम

सूत्र नं. 2

1	भूसा और पुआल (करीब 6'' कटा हुआ)	300 किलोग्राम (बराबर मात्रा में)
2	केल्शियम अमोनियम नाइट्रेट खाद	9 किलोग्राम
3	यूरिया	4 किलोग्राम
4	चोकर	15 किलोग्राम
5	जिप्सम	20 किलोग्राम

विधि

ऊपर लिखे किसी एक सूत्र को चुनकर नीचे दिये गये चरणों में कम्पोस्ट तैयार करें।

1. मिश्रण तैयार करना

गेहूँ के भूसे के मिश्रण को पक्के फर्श पर 1–2 दिन (24–48 घण्टों) तक रूक–रूक कर पानी का छिड़काव करके गीला किया जाता है। भूसे को गीला करते समय पैरों से दबाना और अच्छा रहता है। साथ ही गीले भूसे की ढेरी बनाने के 12–16 घंटे पहले, जिप्सम को छोड़कर अन्य सभी सामग्री जैसे उर्वरकों व चोकर को एक साथ मिलाकर हल्का गीला कर लेते हैं तथा ऊपर से गीली बोरी से ढ़क देते हैं ।

2. ढ़ेर बनाना

गीले किये गये मिश्रण (भूसे व उर्वरक आदि) को मिलाकर करीब 5 फुट चौड़ा व 5 फुट ऊंचा ढेर बनाते हैं। ढेर की लम्बाई सामग्री की मात्रा पर निर्भर करती है लेकिन ऊंचाई व चौड़ाई ऊपर लिखे माप से अधिक व कम नहीं होनी चाहिए। यह ढेर पांच दिन तक (ढेर

बनाने के दिन के अतिरिक्त) ज्यों का त्यों बना रहता है। बाहरी परतों में नमी कम होने पर आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव किया जा सकता है। दो तीन दिनो में इस ढेर का तापमान करीब 65–70 डिग्री सेल्सियस हो जाता है जो कि एक अच्छा संकेत है।

3. पलटाई क्रम

1) पहली पलटाई (6वां दिन) – छठवें दिन ढेर को पहली पलटाई दी जाती है। पलटाई देते समय इस बात का विशेष ध्यान रखें कि ढेर के प्रत्येक हिस्से की उलट–पलट अच्छी तरह हो जाये ताकि प्रत्येक हिस्से को सड़ने–गलने के लिए पर्याप्त वायु व नमी प्राप्त हो जाये। ढेर बनाते समय यदि खाद में नमी कम हो तो आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव कर लेते हैं। नये ढेर का आकार व नाप पहले ढेर की भांति ही होता है। आगे की पलटाईयाँ भी पहली पलटाई की भांति की जाती है।
2) दूसरी पलटाई (10 वां दिन)
3) तीसरी पलटाई (13 वां दिन) : इस पलटाई के समय जिप्सम भी मिलायें।
4) चौथी पलटाई (16 वां दिन)
5) पांचवीं पलटाई (19 वां दिन)
6) छठवीं पलटाई (22 वां दिन)
7) सातवीं पलटाई (25 वां दिन): इस पलटाई के समय किसी कीटनाशक का 2.0 मिली0 प्रति लीटर पानी के साथ छिड़काव करें ।
8) आठवीं पलटाई (28 वां दिन)

अट्ठाइसवें दिन खाद (कम्पोस्ट) में अमोनिया व नमी का परीक्षण किया जाता है। नमी का स्तर जानने के लिए खाद को मुट्ठी में दबाते हैं, यदि दबाने पर हथेली व उंगलियां गीली हो जाये परन्तु खाद से पानी निचुड़कर न बहे, इस अवस्था में खाद में नमी का स्तर उचित होता है तथा ऐसी दशा में कम्पोस्ट में 68–70 प्रतिशत नमी मौजूद होती है जो कि बीजाई के उपयुक्त है। अमोनिया का परीक्षण करने के लिए खाद को सूंघा जाता है, सूंघने पर यदि अमोनिया की गंध (गौशाला में पशु मूत्र जैसी गंध) आती हैं तो 3 दिन के अंतर से एक या दो पलटाई और देनी चाहिए। जब अमोनिया की गंध बिल्कुल समाप्त हो जाये और खाद से मीठी गंध आये तब खाद को फर्श पर फैला दिया जाता है और उसे 25 डिग्री सेल्सियस तापमान तक ठण्डा होने दे, तत्पश्चात बीजाई करें।

बीजाई (स्पानिंग) करना

उपरोक्त विधि से तैयार खाद में बीज मिलाया जाता है। बीज देखने में श्वेत व रेशमी कवक जालयुक्त हो तथा इसमें किसी भी प्रकार की अवांछित गंध ना हो। बीजाई करने से पहले बीजाई स्थान व बीजाई में प्रयुक्त किये जाने वाले बर्तनों को 2.0 प्रतिशत फार्मेलीन घोल में धोयें व बीजाई का कार्य करने वाले व्यक्ति अपने हाथों को साबुन से धोयें, ताकि खाद में

किसी प्रकार के संक्रमण से बचा जा सके। इसके पश्चात् 0.5 से 0.75 प्रतिशत की दर से बीज मिलायें यानि कि 100 कि. ग्रा. तैयार कम्पोस्ट के लिए 500–750 ग्राम बीज पर्याप्त है।

बीजित खाद का पॉलीथीन के थैलों में भरना व कमरों में रखना

किसी हवादार कमरे में लोहे या बांस या अन्य प्रकार की मजबूत लकड़ी की सहायता से लगभग दो–दो फुट की दूरी पर कमरे की ऊँचाई की दिशा में (अलमारी के समान) एक के उपर एक मचान बना लें। मचान की चौड़ाई 4.0 फीट से अधिक ना रखें। यह कार्य शुरूआत में ही कर लेना चाहिए। खाद भरे थैले रखने से 2 दिन पहले इस कमरे के फर्श को 2.0 प्रतिशत फार्मेलीन घोल से धोयें तथा दीवारों व छत पर इस घोल का छिड़काव करें। इसके तुरंत बाद कमरे के दरवाजे तथा खिड़कियां इस तरह बंद करें कि अंदर की हवा बाहर न आ सके। अब बीजाई करने के साथ–साथ, 10–12 किलोग्राम बीजित खाद को पॉलीथीन के थैलों में भरते जायें तथा थैलों का मुंह, कागज की थैली के समान पॉलीथीन मोड़कर बंद कर दें। यहाँ यह ध्यान रखे कि थैले में खाद 1 फुट से ज्यादा न हो। इसके पश्चात इन थैलों को कमरे में बने बांस के टांड पर एक–दूसरे से सटाकर रख दें। खाद को बीजाई करने के पश्चात टांडों पर करीब 6 इंच मोटाई में ऐसे ही फैला कर रख सकते हैं। ऐसी दशा में टांडो के नीचे पॉलीथीन की शीट बिछा दें। खाद को फैलाने के बाद ऊपर से अखबारों से ढक दिया जाता है और अखबारों पर दिन में एक या दो बार पानी का छिड़काव किया जाता है। तत्पश्चात कमरे में 22–25 डिग्री सेल्सियस तापमान व 80–90 प्रतिशत नमी बनाये रखें। तापमान को बिजली चलित उपकरणों जैसे कूलर, हीटर आदि का प्रयोग करके नियंत्रित किया जा सकता है। नमी कम होने पर कमरे की दीवारों पर पानी का छिड़काव करके व फर्श पर पानी भरकर नमी को बढ़ाया जा सकता है।

केसिंग मिश्रण तैयार करना व केसिंग परत चढ़ाना

बीजाई के लगभग 12–15 दिन बाद, कवक जाल (बीज के तन्तु) खाद में फैल जाते है और खाद का रंग गहरे भूरे से बदलकर फफूंद जैसा सफेद हो जाता है। इस अवस्था में खाद को केसिंग मिश्रण की परत से ढकना पड़ता है तभी खुम्ब कलिकायें निकलना आरंभ होती है। केसिंग मिश्रण एक प्रकार की मिट्टी है जिसे दो साल पुरानी गोबर की खाद व दोमट मिट्टी (बराबर हिस्सों में) को मिलाकर तैयार किया जाता है। लेकिन इस केसिंग मिश्रण को खाद पर चढ़ाने से पहले इसे रोगाणुओं व सूत्रकृमि आदि से मुक्त करना होता है। केसिंग मिश्रण को रोगाणु मुक्त करने के लिए 2 प्रतिशत फार्मेलीन के घोल से उपचारित करते है। फार्मेलीन नामक रसायन का 2 प्रतिशत घोल तैयार करने के लिए एक लीटर फार्मेलीन (40 प्रतिशत सक्रिय तत्व) को 20 लीटर पानी में घोला जाता है। इस घोल से केसिंग मिश्रण को गीला किया जाता है । घोल की मात्रा केसिंग मिश्रण की मात्रा पर निर्भर करती है। तत्पश्चात इस

मिश्रण को पॉलीथीन से चारों तरफ से ढक देते हैं और इस पॉलीथीन को केसिंग प्रक्रिया शुरू करने के 24 घण्टे पूर्व हटाते हैं, पॉलीथीन उतारने के बाद केसिंग मिश्रण को साफ बेलचे से उलट–पलट देते हैं। केसिंग तैयार करने का कार्य केसिंग प्रक्रिया शुरू करने के लगभग 15 दिन पहले समाप्त कर देना चाहिए यानि कि बीजाई के बाद कार्य शुरू कर देना चाहिए। कवक जाल फैले थैलों का मुंह खोलकर खाद की सतह को हल्का–हल्का दबाकर एक सरीखा कर लेते हैं तथा केसिंग मिश्रण की 3–4 से.मी. मोटी परत चढ़ा दी जाती है व थैले की अतिरिक्त पॉलीथीन को नीचे की ओर मोड़ देते हैं तथा पहले की भांति थैलों को कमरे में रख देते हैं। इस दौरान भी कमरे में 22–25 डिग्री सेल्सियस तापमान तथा 80–90 प्रतिशत नमी बनाये रखें।

केसिंग के उपरान्त रख रखाव

केसिंग प्रक्रिया पूर्ण करने के पश्चात् अधिक देखभाल करनी पड़ती है, प्रतिदिन थैलों में नमी का जायजा लेना चाहिये तथा आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव करना चाहिए। केसिंग करने के लगभग एक सप्ताह बाद जब कवक जाल केसिंग परत में फैल जाये तब कमरे के तापमान को 22–25 डिग्री सेल्सियस से घटाकर 16–18 डिग्री सेल्सियस पर ले आना चाहिए तथा इस तापमान को पूरे फसल उत्पादन काल तक बनाये रखना चाहिए। इस तापमान पर छोटी–छोटी खुम्ब कलिकायें बनना शुरू हो जाती है जो शीघ्र ही परिपक्व खुम्ब में बदल जाती हैं। इस चरण में नमी को करीब 85 प्रतिशत तक रखे। सुबह व शाम थैलों पर पानी का छिड़काव करना चाहिए। तापमान व नमी के अतिरिक्त, खुम्ब उत्पादन के लिये हवा का आदान–प्रदान उत्तम होना चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि उत्पादन कक्ष में रोशनदान, खिड़की व दरवाजे द्वारा आसानी से हवा अंदर आ सके और अंदर की हवा बाहर जा सके। सुबह–शाम कुछ देर के लिये दरवाजे व खिड़कियां खोल देनी चाहिए।

खुम्बों की तुड़ाई, भण्डारण व उपज

खुम्ब कलिकायें बनने के लगभग 2–4 दिन बाद, विकसित होकर बड़े–बड़े खुम्बों में परिवर्तित हो जाती हैं जब इन खुम्बों की टोपी का आकार 3–4 से.मी हो तथा टोपी बंद हो (छत्रक न बना हो) तब इन्हें परिपक्व समझना चाहिये और मरोड़ कर तोड़ लेना चाहिए। तुड़ाई के पश्चात् शीघ्र ही इन खुम्बों को उपयोग में ले लेना चाहिए क्योंकि यह जल्दी खराब होने वाली सब्जी है। सामान्य तापमान पर खुम्बों को तोड़ने के बाद 12 घंटों तक सही अवस्था में रखा जा सकता है। 2–3 दिन तक फ्रिज़ में रख सकते हैं। लम्बे समय तक भण्डारण करने के लिये मशरूम को नमक के घोल में रखा जा सकता है। इस प्रकार करीब–करीब प्रतिदिन खुम्ब की पैदावार मिलती रहती है तथा 8–10 सप्ताह में पूरा उत्पादन मिल जाता है। एक क्विंटल कम्पोस्ट से औसतन 15–20 किलोग्राम खुम्ब की उपज प्राप्त होती है।

गेंदा की उन्नत खेती

गेंदा बहुत ही उपयोगी एवं आसानी से उगाया जाने वाला फूलों का पौधा है। यह मुख्य रूप से सजावटी फसल है। यह खुले फूल, माला एवं भू–दृश्य के लिए उगाया जाता है। मुर्गियों के दाने में भी यह पीले वर्णक का अच्छा स्त्रोत है। इसके फूल बाजार में खुले एवं मालाएं बनाकर बेचे जाते है। गेंदे की विभिन्न ऊँचाई एवं विभिन्न रंगों की छाया के कारण भू–दृश्य की सुन्दरता बढ़ाने में इसका बड़ा महत्व है। साथ ही यह शादी–विवाह में मण्डप सजाने में भी अहम् भूमिका निभाता है। यह क्यारियों एवं हरबेसियस बॉर्डर के लिए अति उपयुक्त पौधा है। इस पौधे का अलंकृत मूल्य उच्च है क्योंकि इसकी खेती वर्ष भर की जा सकती है। तथा इसके फूलों का धार्मिक एवं सामाजिक उत्सवों में बड़ा महत्व है। हमारे देश में मुख्य रूप से अफ्रीकन गेंदा और फ्रेंच गेंदा की खेती की जाती है।

मृदा (मिट्टी)

गेंदे की खेती विभिन्न प्रकार की मृदा में की जा सकती है। वैसे गहरी मृदा उर्वरायुक्त मुलायम जिसकी नमी ग्रहण क्षमता उच्च हो तथा जिसका जल निकास अच्छा हो उपयुक्त रहती है। विशेष रूप से बलुई–दोमट मृदा जिसका पी.एच. 7.0–7.5 हो सर्वोतक रहती है।

जलवायु

गेंदे की खेती संपूर्ण भारतवर्ष में सभी प्रकार की जलवायु में की जाती है। विशेषतौर से शीतोषण और सम–सीतोष्ण जलवायु उपयुक्त होती है। नमीयुक्त खुले आसमान वाली जलवायु इसकी वृध्दि एवं पुष्पन के लिए बहुत उपयोगी है लेकिन पाला इसके लिए नुकसानदायक होता है। इसकी खेती सर्दी, गर्मी एवं वर्षा तीनों मौसमों में की जाती है। इसकी खेती के लिए 14.5–28.6 डिग्री सैं. तापमान फूलों की संख्या एवं गुणवत्ताा के लिए उपयुक्त है जबकि उच्च तापमान 26.2 डिग्री सैं. से 36.4 डिग्री सैं. पुष्पोत्पादन पर विपरीत प्रभाव डालता है।

किस्मों का चुनाव

1. अफ्रीकन गेंदा

पूसा नारंगी गेंदा, पूसा बसंती गेंदा, अलास्का, एप्रिकॉट, बरपीस मिराक्ल, बरपीस ह्वाईट, क्रेकर जैक, क्राऊन ऑफ गोल्ड, कूपिड़, डबलून, फ्लूसी रफल्स, फायर ग्लो, जियाण्ट सनसेट, गोल्डन एज, गोल्डन क्लाइमेक्स जियान्ट,गोल्डन जुबली, गोल्डन मेमोयमम, गोल्डन येलो, गोल्डस्मिथ, हैपिनेस, हवाई, हनी कॉम्ब, मि.मूनलाइट, ओरेन्ज जूबली,प्रिमरोज, सोबेरेन, रिवरसाइड, सन जियान्ट्स, सुपर चीफ, डबल, टेक्सास, येलो क्लाइमेक्स, येलो फलफी, येलोस्टोन,जियान्ट डबल अफ्रीकन ओरेन्ज, जियान्ट डबल अफ्रीकन येलो इत्यादि।

हाइब्रिड्स : अपोलो, क्लाइमेक्स, फर्स्ट लेडी, गोल्ड लेडी, ग्रे लेडी, मून सोट, ओरेन्ज लेडी, शोबोट, टोरियडोर,इन्का येलो, इन्का गोल्ड, इन्का ओरेज्न इत्यादि।

2. फ्रेन्च गेंदा

(अ) सिंगल : डायण्टी मेरियटा, नॉटी मेरियटा, सन्नी, टेट्रा रफल्ड रेड इत्यादि।

(ब) डबल : बोलेरो, बोनिटा, ब्राउनी स्कॉट, बरसीप गोल्ड नगेट, बरसीप रेड एण्ड गोल्ड, बटर स्कॉच, कारमेन,कूपिड़ येलो, एल्डोराडो, फोस्टा, गोल्डी, जिप्सी डवार्फ डबल, हारमनी, लेमन ड्राप, मेलोडी, मिडगेट हारमनी, ओरेन्ज फ्लेम, पेटाइट गोल्ड, पेटाइट हारमनी, प्रिमरोज क्लाइमेक्स, रेड ब्रोकेड, रस्टी रेड, स्पेनिश ब्रोकेड, स्पनगोल्ड, स्प्री,टेन्जेरीन, येलो पिग्मी इत्यादि।

खाद्य एवं उर्वरक

सड़ी हुई गोबर की खाद	: 15–20 टन प्रति हैक्टेयर
यूरिया	: 600 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर
सिंगल सुपर फास्फेट	: 1000 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर
म्यूरेट ऑफ पोटाश	: 200 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर

सारी सड़ी हुई गोबर की खाद, फास्फोरस, पोटाश व एक तिहाई भाग यूरिया को मृदा तैयार करते समय अच्छी तरह मिला लें तथा यूरिया की बची हुई मात्रा का एक हिस्सा पौधे खेत में लगाने के 30 दिन बाद व शेष मात्रा उसके15 दिन बाद छिड़काव करके प्रयोग करें।

बीज शइया तैयार करना

गेंदे की पौध तैयार करने के लिए बीज शइया तैयार करें, जो कि भूमि की सतह से 15 सैं.मी. ऊँची होनी चाहिए ताकि जल का निकास ठीक ढंग से हो सके। बीज शइया की चौड़ाई 1 मीटर तथा लंबाई आवश्यकतानुसार रखें। बीज बुवाई से पूर्व बीज शइया का 0.2 प्रतिशत बाविस्टीन या कैप्टान से उपचारित करें ताकि पौधे में बीमारी न लग सके और पौध स्वस्थ रहे।

बीजों की बुवाई

अच्छी किस्मों का चयन कर बीज शइया पर सावधानीपूर्वक बुवाई करें। ऊपर उर्वर मृदा की हल्की परत चढ़ाकर, फव्वारे से धीरे–धीरे पानी का छिड़काव कर दें।

बीज दर :

800 ग्राम से 1 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर बीजों का अंकुरण 18 से 30 डिग्री सैं. तापमान पर बुवाई के 5–10दिन में हो जाता है।

बुवाई का समय

पुष्पन ऋतु	बीज बुवाई का समय	पौध रोपण का समय
वर्षा	मध्य – जून	मध्य – जुलाई
सदी	मध्य – सितम्बर	मध्य – अक्तबर
गर्मी	जनवरी – फरवरी	फरवरी – मार्च

पौध रोपण

अच्छी तरह तैयार क्यारियों में गेंदे के स्वस्थ पौधों को जिनकी 3–4 पत्तियां हों पौध रोपण हेतु प्रयोग करें। जहां तक संभव हो पौध रोपाई शाम के समय ही करुें तथा रोपाई के पश्चात् चारों तरफ मिट्टी को दबा दें ताकि जड़ों में हवा न रहं एवं हल्की सिंचाई करें।

पौधे से पौधे की दूरी

1– अफ्रीकन गेंदा : 45 गुणा 45 सैं.मी. या 45 गुणा 30 सैं.मी.

2– फ्रेन्च गेंदा : 20 गुणा 20 सैं.मी. या 20 गुणा 10 सैं.मी.

सिंचाई

गेंदा एक शाकीय पौधा है। अतः इसकी वानस्पतिक वृध्दि बहुत तेज होती है। सामान्य तौर पर यह 55–60 दिन में अपनी वानस्पतिक वृध्दि पूरी कर लेता है तथा प्रजनन अवस्था में प्रवेश कर लेता है। सर्दियों में सिंचाई 10–15 दिन के अंतराल पर तथा गर्मियों में 5–7 दिन के अंतराल पर करें।

वृद्धि नियामकों का प्रयोग

पौधों की रोपाई के चार सप्ताह बाद एस.ए.डी.एच. का 250–2000 पी.पी.एम. पर्णीय छिड़काव करने से पौधों में समान वृध्दि पौधे में शाखाओं के बढ़ने के साथ ही फूलों की उपज व गुणवत्ताा भी बढ़ती है।

पिंचिंग (शीर्ष कर्तन)

पौधे के शीर्ष प्रभाव को खत्म करने के लिए पौध रोपाई के 35–40 दिन बाद पौधों को ऊपर से चुटक देना चाहिए जिससे पौधों की बढ़वार रूक जाती है। तने से अधिक से अधिक संख्या में शाखाएं प्राप्त होती है तथा प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक से अधिक मात्रा में फूल प्राप्त होते हैं।

खरपतावार नियंत्रण

खरपतवार पौधों की उपज व गुणवत्ताा पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। क्योंकि खरपतवार मृदा से नमी व पोषण दोनों चुराते हैं तथा कीड़ो एवं बीमारियों को भी शरण देते हैं। अतः 3–4 बार हाथ द्वारा मजदूरों से खरपतवार निकलवा दें तथा अच्छी गुढ़ाई कराएं।

फूलों की तुड़ाई : पूरी तरह खिले फूलों को दिन के ठण्डे मौसम में यानि कि सुबह जल्दी या शाम के समय सिंचाई के बाद तोड़े ताकि फूल चुस्त एवं दूरुस्त रहें।

पैकिंग

ताजा तोड़े हुए फूलों को पॉलीथीन के लिफाफों, बांस की टोकरियों या थैलों में अच्छी तरह से पैक करके तुरंत मण्डी भेजें।

उपज : अफ्रीकन गेंदें से 20 – 22 टन ताजा फूल तथा फेंच गेंदे से 10 – 12 टन ताजा फल प्रति हैक्टेयर औसत उपज प्राप्त होती है।

खाद्यान्न और पोषण सुरक्षा हेतु भविष्य की अद्‌भुत फसल
किनोवा की खेती

अनियंत्रित जनसंख्या, बढ़ते शहरीकरण, ओद्योगिकीकरण, पर्यावरण प्रदूषण एवं जलवायु परिवर्तन के कारण विश्व की जैव विविधता में अपूर्णनीय क्षति हुई है। विश्व में पाई जाने वाली आर्थिक महत्व की 80,000 पौध प्रजातियो मे से 30,000 प्रजातियाँ खाने योग्य है जिसमें से अभी तक 7000 प्रजातियाँ ही मनुष्य द्वरा उगाई गई है। इनमें से मात्र 158 पौध प्रजातियाँ ही मानव समाज के लिए खाद्यान्न के रूप में प्रयोग में लाई जा रही है। वर्तमान में तीस फसलों से विश्व में 90 प्रतिशत खाद्यान्न उत्पादित होता है। विश्व के 75 प्रतिशत खाद्यान्न का मुख्य स्त्रोत 10 फसलें ही है जिनमें से चावल, गेहूँ व मक्का की भागीदारी लगभग 60 प्रतिशत है। भारत में तो अधिकांश जनता की खाद्यान्न की जरूरते महज चावल व गेंहू से पूरी होती है। जाहिर है कि मात्र कुछ फसलो पर विश्व की खाद्यान्न आपूर्ति टिकी हुई है जो कि भविष्य के लिए शुभ संकेत नहीं है। हमारे पूर्वज विभिन्न ऋतुओ के हिसाब से अपने भोजन में विविध खाद्यान्नो का इस्तेमाल करते थे जिससे वे सदैव स्वस्थ व कार्य पर मुस्तैद रहते थे। वैसी विविधता तो अब कहानियो में ही रह गई है। आज कुछ खास फसलो पर निर्भरता को कम करते हुए अशिंचित क्षेत्रों की पर्यावरण व पोषण हितैषी फसलो के महत्व को पुनः स्थापित करने की अति आवश्यकता है। तभी हम असामान्य जलवायु परिवर्तन, जनसंख्या विस्फोट और कुपोषण जैसी महामारी से निजात पाने में सफल हो सकते है। आज हमारी कृषि में लागत बढ़ रही है और लाभ सीमित होता जा रहा है, जिससे खेती–किसानी से ग्रामीण युवाओ का मोह भंग होना भविष्य के लिए गंभीर खतरा है। धान–गेहूँ फसल पद्धति पर आधारित हमारी खेती पर खतरे के बादल मंडराने लगे है। गिरते भूजल बढते तापक्रम घटती जमीनो की उर्वराशक्ति आदि ऐसे कारक है जिनकी अनदेखी करना बहुत भारी पड़ सकता है। पुरातन काल में बहुत सी ऐसी फसलें उगाई जाती थी जिनसे कम पानी और सीमित सस्य प्रबंधन में भी बेहतर उत्पादन प्राप्त कर लिया जाता था। खाद्यान्न और पोषण सुरक्षा को दृष्टिगत रखते हुए अल्प–प्रयुक्त प्राचीन फसलों को विश्वस्तर पर संभावित वैकल्पिक खाद्यान्न फसलो के रू‌प में देखा जा रहा है। वास्तव में विलुप्त होती जा रही ये फसलें विपरीत परिस्थितियो एवं समस्याग्रस्त भूमियो पर भी अच्छी पैदावार देकर हमारी भोजन व पोषण की आवश्यकता की पूर्ति करती है। यदि इन फसलो की खेती को यथोचित प्रोत्साहन दिया जाय तो यह छोटे व मझोले किसानो के लिए वरदान साबित होगी। ऐसी ही एक अदभुत फसल जिसे किन्वा के नाम से जाना जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ–कृषि एवं खाद्य संगठन ने वर्ष 2013 को अन्तराष्ट्रीय किनोवा वर्ष घोषित किया है जिससे इस जीवनदायनी फसल के महत्व से जन साधारण परिचित हो सकें । आइए इस अद्‌भुत फसल के चमत्कारिक गुणों से आपको परिचित करवाते है।

किनोवा क्या है

दक्षिण अमेरिका की एन्डीज पहाड़ियो पर आदिकाल से यह एक वर्षीय पौधा उगाया जा रहा है। किनोवा एक स्पेनिश शब्द है। यह बथुआ कुल का सदस्य है जिसका वानस्पतिक नाम चिनोपोडियम किनोवा है। इसका बीज अनाज जैसे चावल,गेंहू आदि की भाँती प्रयोग में लाया जाता है। चूकि यह घास कुल का सदस्य नहीं है इसलिए इसे कूट अनाज (Pseudocereal) की श्रेणी में रखा गया है जिसमे चौलाई आदि को भी रखा गया है। खाद्यान्नो से अधिक पौष्टिक और खाद्यान्नो जैसा उपयोग इसलिए इसे महाअनाज कहा जाना चाहिए। बथुआ, पालक व चुकंदर इसके सगे सम्बन्धी पौधे है। बथुआ प्राचीन काल से ही हमारे देश में खाद्यान्न एवं हरे पत्तेदार सब्जी के रूप में प्रयोग होता है। बथुआ की चार प्रजातियो की खेती की जाती है। ये प्रजातियाँ है. चीनोपोडियम एल्बम, चीनोपोडियम क्विनआ, चीनोपोडियम नुट्टेलिएई और चीनोपोडियम पेल्लिडिकली है। इनमें प्रथम प्रजाति भारतीय उपमहादीप में लोकप्रिय है। आजकल आधुनिकता की दौड़ में हमने इसे समस्यामूलक पौधा खरपतवार मानकर इसे जडमूल से नष्ट करने में लगे है। गेंहू , चना, सरसों के खेतो में स्वतः उग आता है और यदा कदा कुछ समझदार इसे भाजी या भोज्य पदार्थ के रूप में इस्तेमाल कर लेते है। वास्तव में पोषण व स्वास्थ्य में हरी पत्तेदार सब्जिओ में बथुआ का कोई मुकाबला नहीं हो सकता। बथुआ की अन्य तीन प्रजातियो की खेती मध्य व दक्षिणी अमरीका की एन्डीज पहाड़ियो मेक्सिको, पेरू, चायल, इक्वाडोर और बोल्वीया में अधिक प्रचलित है। तमाम खूबियो के कारण अब क्विनआ एन्डीज की पहाड़ो से निकलकर उत्तरी अमेरिका, यूरोप, अफ्रीका, चीन, जापान और भारत में भी सुपर बाजारों में उपस्थिति दर्ज करा चुकी है और अमीर लोगो की पहली पसंद बनती जा रही है। अब इन देशो में इसकी खेती को विस्तारित करने का प्रयोग हो रहा है। पुरानी इन्कास सभ्यता में यह पवित्र अनाज कहा जाता था तथा वहा के लोग इसे मातृ–दाना (Mother-grain) मानते थे जिसके खाने से लंबा व स्वस्थ जीवन मिलता था। भारत में उगाये गये इसके पौधे 1.5 मीटर की ऊचे, शाखायुक्त रंग विरंगे चोड़े पत्ते वाले होते है। बीज विविध रंग यथा सफेद, गुलाबी हल्के कत्थई आदि रंग के होते है। इसकी जड़े काफी गहराई तक जाती है जिससे असिंचित बारानी अवस्थाओ में इसे सफलतापूर्वक उगाया जाता है। संपूर्ण प्रोटीन में धनी किनोवा को भविष्य का बेहतर अनाज (सुपर ग्रेन) माना जा रहा है। विश्व में इसकी खेती पेरू, बोल्वीया और इक्वाडोर देशो में नकदी फसल के रूप में प्रचलित है। खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार संसार में इसे 86,303 हैक्टर में उगाया जा रहा है जिससे 71,419 मेट्रिक टन पैदावार हो रही है। अब इसके क्षेत्रफल में तेजी से बढ़त हो रही है। किनोवा के उपयोग किनोवा को

चावल की भांति उबाल कर खाया जा सकता है। दानो से आटा व दलिया बनाया जाता है। स्वादिष्ट नाश्ता, शूप, पूरी, खीर, लड्डू आदि विविध मीठे और नमकीन व्यंजन बनाये जा सकते है। गेहूँ व मक्का के आटे के साथ क्विनवा का आटा मिलाकर ब्रेड, विस्किट, पास्ता आदि बनाये जाते है। पेरू और बोल्वीया में किन्वा फ्लेक्स व भुने दानो का व्यवसायिक उत्पादन किया जाता है। ग्लूटिन मुक्त यह इतना पौष्टिक खाद्यान्न है कि आन्तरिक्ष अभियान के दौरान आदर्श खाद्य के रूप में इसे इस्तेमाल किया जा सकता है। भारत में गेहूँ के आटे की पौष्टिकता बढ़ाने में इसके दानो का उपयोग किया जा सकता है जिससे कुपोषण की समस्या से निजात मिल सकती है।

पौष्टिकता का खजाना है किनोवा

प्रकृति की अनुपम देन किनोवा एक असाधारण परम अन्न है जिसके सेवन से शरीर को आवश्यक कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, विटामिन, खनिज और रेशा संतुलित मात्रा में प्राप्त हो जाते है। इस अदभुत दाने की पोषक महत्ता अग्र प्रस्तुत है।

1. **प्रोटीन** :–

वानस्पतिक प्रोटीन का सबसे बेहतर स्त्रोत किनोवा अनाज है जिसमें शरीर के लिए महत्वपूर्ण सभी दसों आवश्यक अमीनो अम्ल संतुलित अनुपात में पाये जाते है, जो कि अन्य अनाज में नही पाए जाते है। इसलिए यह शाकाहारियो में लोकप्रिय खाद्य पदार्थ बन रहा है। क्विनवा के 100 ग्राम दानो में 14.18 ग्राम उच्च गुणवत्तायुक्त प्रोटीन (44–77 प्रतिशत एल्ब्यूमिन व ग्लोब्यूलिन) पाई जाती है। गेहूँ व चावल में प्रोटीन की मात्रा क्रमशः 14 व 7.5 प्रतिशत के आसपास होती है। अधिकतर अनाजो में लाइसीन प्रोटीन की कमी होती है जबकि किनोवा के दानो में पर्याप्त मात्रा में लाइसीन पाया जाता है।

2. **रेशा** :–

इसमें पर्याप्त मात्रा में घुलनशील व अघुलनशील रेशे (Fiber) पाए जाने के कारण यह खून के कोलेस्ट्राल, खून की शर्करा व रक्तचाप को नियंत्रित करने में सहायक होता है। अन्य अनाजो की तुलना में इसमें तन्तुओ की मात्रा लगभग दो गुना अधिक होती है। इस कारण इसका सेवन करने से

पेट सबंन्धी विकार यथा कब्ज तथा बवासीर जैसी समस्याओ से निजात मिलती है जो कि प्रायः भोजन में तन्तुओ की कमी से होती है। इसमें लगभग 4.1 प्रतिशत रेशा पाया जाता है जबकि गेहूँ में 2.7 प्रतिशत और चावल में मात्र 0.4 प्रतिशत तन्तु होते है।

3. **<u>लोहा</u>** :–

हमारे शरीर के लिए लोहा (iron) अत्यावश्यक तत्व है । शरीर में हीमोग्लोबिन के निर्माण और शरीर में आक्सीजन प्रवाह में लोह तत्व सहायक होता है। शरीर के तापमान को नियंत्रित करने, दिमाग को क्रियाशील बनाने तथा शरीर में इन्जाइम की क्रिया को भी बढ़ानें में मदद करता है।

4. **<u>कैल्शियम</u>**:–

भरपूर शरीर में स्वस्थ और मजबूत हड्डियो के लिए कैल्शियम निहायत जरूरी पोषक तत्व है। सुंदर और सुडौल दांतो के लिए भी कैल्शियम आवश्यक है। किनोवा में गेहूँ से लगभग डेढ़ गुना अधिक मात्रा में कैल्शियम पाया जाता है। अतः भोजन में किनोवा अनाज सम्मलित करने से हमारी हड्डियाँ व दाँत स्वस्थ व मजबूत रह सकते है।

5. **<u>वसा</u>**:–

इस अदभुत अनाज में वसा की मात्रा बहुत ही कम (100 ग्राम दानो में 4.86 ग्राम) होती है। इसके वसा में असंतृप्त वसा (लिलोलिक व लिओलिनिक अम्ल) उच्च्च गुणवत्ता वाली मानी गई है। अतः यह न्यून कैलोरी वाला खाद्य है जिसे मौटापा नियंत्रित करने में प्रयोग किया जा सकता है । इसके 100 ग्राम पके दानो से 120 कैलोरी मिलती है जबकि इतने ही गेहूँ आटे से 364 कैलौरी प्राप्त होती है । किनोवा की 120 कैलौरी में सिर्फ 2 प्रतिशत वसा, 7 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 8 प्रतिशत प्रोटीन व लोहा, 11 प्रतिशत रेसा, 16 प्रतिशत मैग्नेशियम तथा 4 प्रतिशत पोटेशियम मिलता है।

6. **<u>विटामिन</u>**:–

किनोवा के दानो में बहुमूल्य बिटामिन्स–बी समूह–बीटा कैरोटिन व नियासिन (बी–3) राइबो फ्लेविन (बी–2), विटामिन–ई (अल्फा–टोको फिरोल) और कैरोटिन गेहूँ व चावल से अधिक मात्रा में पायी जाती है।

7. **<u>ग्लूटिन</u>**:–

किनोवा का उपयोग अनाज की भांति किया जाता है। न तो यह अनाज और न ही यह घास है। दरअसल यह पालक व चुकन्दर की भाँती बथुआ परिवार का सदस्य है। इसके दानो में ग्लूटिन (एक प्रकार का प्रोटीन) नहीं हो होता है जो कि गेहँ में प्रमुखता से पाया जाता है। सेलियक रोग से

पीडित व्यक्ति को ग्लूटिनयुक्त भोजन नहीं करना चाहिए। ऐसे लोगो के लिए यह वरदान साबित हो सकता है।

8. **निम्न ग्लाइसेमिक इंडेक्सः**–
इसमें जटिल कार्बोज होने के बाबजूद इसका ग्लाइसेमिक इंडेक्स निम्न पाया गया है जिससे डायबेटिक मरीज के लिए लाभदायक खाद्य है।

9. **और भी बहुत कुछः**–
इसके दानो में कैल्शियम और लोहे जैसे महत्वपूँ खनिज तो पाये ही जाते है साथ ही पोटेशियम, सोडियम, कापर, मैग्नीज, जिंक व मैग्नेशियम भी काफी मात्रा में पाये जाते है। कापर रक्त में लाल कणों के निर्माण में योगदान देता है। मैग्नेशियम रक्त नलिकाओ को आराम देता है जिससे तनाव व शिर दर्द से निजात मिलती है। लोहा लाल रक्त कोशिकाओ के निर्माण में सहायक होता है तो कापर और मैग्नीज तमाम उपापचयी क्रियाओ में मदद करता है। पोटेशियम शरीर में ह्रदय गति व रक्त दबाव को नियंत्रित करता है । किनोवा के दानो की ऊपरी पर्त पर एक अपोषक तत्व–सपोनिन (कषैला पदार्थ) पाया जाता है। इसलिए प्रसंस्करण (छिलका उतारकर) करने के बाद इसका उपभोग किया जाता है। सपोनिन का उपयोग साबुन, शैम्पू, प्रसाधन सामग्री बनाने तथा दवा उद्योग में उपयोग किया जाता है।

भारत में खेती की अच्छी संभावना

समस्त प्राकृतिक विविधताओ से ओत–प्रोत भारत की कृषि जलवायु एवं मिट्टियो में सभी प्रकार की वनस्पतियाँ उगती है। चिनोपोडियम किनोवा –कूट अनाज की खेती भारत के हिमालयीन क्षेत्र से लेकर उत्तर भारत के मैदानी भागो में सफलता पूर्वक की जा सकती है। आन्ध्र प्रदेश में इस पर प्रयोग प्रारंभ हो गये है। भारत का बड़ा भू–भाग सूखाग्रस्त है तथा इन इलाको में खेती किसानी वर्षा

पर निर्भर है। इन क्षेत्रों की अधिकांश जनसंख्या भूख, गरीबी और कुपोषण की शिकार है। सीमित पानी और न्यूनतम खर्च में अधिकतम उत्पादन और आमदनी देने वाली फसल प्राप्त हो जाने पर यहाँ के लोगों का सामाजिक–आर्थिक जीवन समोन्नत हो सकता है। ऐसी ही अद्भुत फसल है किनोवा जिसे कूट अनाज कहा जाता है। अपार संभावनाओ वाली इस फसल पर नेशनल बोटेनीकल रिसर्च इस्टीटयूट लखनऊ में शोध व किस्म विकास का कार्य प्रारंभ हो गया है। सामान्यतः किनोवा ग्रीष्मऋतु की फसल है। प्रायोगिक तौर पर आन्ध्रप्रदेश अकादमी आफ रूरल डेवलपमेंट हैदराबाद में इसे फरवरी–मार्च में लगाया गया। सीधे प्रकाश तथा तेज गर्मी होने पर भी पौधो की अच्छी बढ़वार तथा फूल–फल विकसित होना शुभ संकेत देता है। देश के अनेक भागो में जून–जुलाई में भी इसकी खेती विस्तारित की जा सकती है। पौध अवस्था से पकने तक लगभग 150 दिन का समय लगता है। बीज अंकुरण के लिए 18–24 डि.से. तापक्रम उपयुक्त समझा जाता है। अच्छी बढ़वार के लिए राते ठण्डी तथा दिन का अधिकतम तापक्रम 35 डि.से. तक उचित माना जाता है। किनोवा की खेती जलनिकास युक्त विभिन्न प्रकार की मृदाओ में की जा सकती है। यह मृदा क्षारीयता, सूखा, पाला, कीट–रोग सहनशील फसल है। इसका बीज बहुत छोटा चौलाई जैसे होने के कारण खेत की ठीक से तैयारी कर मिट्टी को भुरभुरा करना आवश्यक है। अंतिम जुताई के समय खेत में 5–7 टन प्रति हैक्टर की दर से गोबर की खाद मिला देना चाहिए। बुवाई कतारो में 45–60 सेमी. की दूरी पर करते है तथा अंकुरण के पश्चात पौधो का विरलीकरण कर दो पौधो के मध्य 15–45 सेमी. की दूरी स्थापित कर लेना चाहिए। बीज को 1.5–2 सेमी. की गहराई पर लगाना चाहिए। एक मीटर जगह पर बुवाई करने हेतु 1 ग्राम बीज पर्याप्त होता है। उर्वरको की अधिक आवश्यकता नहीं होती है। सूखा सहन करने की बेहतर क्षमता तथा कम जलमांग के कारण सिंचाई कम लगती है। वर्तमान में यह खाद्यान्न आयात किया जाता है। हैदराबाद के सुपर बाजारों में 1500 रूपये प्रति किलो की दर से इसे बेचा जा रहा है। भारत सहित अनेक राज्यो में इसकी खेती और बाजार की बेहतर संभावनाएं है। फसल का रकबा बढ़ने से किसानो की आय में इजाफा होने के साथ–साथ देश में खाद्यान्न व पोषण आहार सुरक्षा कायम करने में हम सफल हो सकेंगे।

स्टीविया की व्यावसायिक खेती

परिचय

आज की अनियमित दिनचर्या एवं खाना पान से विभिन्न प्रकार की बीमारियों का प्रसार तीव्र गति से होता जा रहा है जिसमें मधुमेह एक प्रमुख बीमारी के रूप में उभरी है। चिकित्सा विज्ञान के अनुसार आने वाले समय में आबादी का एक बड़ा हिस्सा इसकी चपेट में आ सकता है। इसलिए आवश्यक हो जाता है कि इसके लिए अभी से बचाव के उपाय खोजे जाएँ जो कारगर हो सके। विशेषकर मधुमेह रोगियों के लिए शक्कर पूर्ति हेतु स्टीविया लाभदायक साबित हो चुका है। स्टीविया के पत्तों में मिठास उत्पन करने वाले तत्व होते हैं जिन्हें स्टीवियोसाइड एवं ग्लूकोसाइड के नाम से जाना जाता है। इसके अलावा इनमें 6 और तत्व होते हैं जिनमें इन्सुलिन को सन्तुलित करने का गुण होता है। इसकी मिठास टेबुल सुगर से ढाई सौ गुना एवं सुक्रोस से तीन सौ गुना अधिक होती है। इसमें कृत्रिम मिठास उत्पन्न करने वाले अन्य कई पदार्थों का विकल्प बनने की अच्छी संभावनायें हैं। अभी तक स्टीविया उत्पादों के उपयोग से मनुष्य पर किसी भी प्रकार का विपरीत प्रभाव पड़ने की शिकायत नहीं पाई है। यह कैलोरी और झागहीन होता है। स्टीवियोसाइड पत्ती में उनके वजन के अनुसार 3 से 10 प्रतिशत तक होता है स्टीवियासाइड में से ग्लूकोसाइड समूह को पृथक पर स्टीविऑइल उत्पादित किया जाता है।

उत्पति स्थान एवं वितरण

इसका विस्तार संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्राजील, जापान, कोरिया, ताइवान एवं दक्षिण पश्चिम एशिया तक है। जापान एवं कोरिया में सामान्यतः इसे (मीठी झाड़ी) के नाम से जाना जाता है।

वनस्पति शास्त्र

स्टीविया रिबौडीआना एस्ट्रा सीएई का सदस्य है। इसका पौधा पतला झाड़ीनुमा होता है। इसके पुष्प छोटे और सफेद तथा अनियमित क्रम होते हैं।

जलवायु

यह एक मध्यम आर्द्रता का सबट्रापिकल पौधा होता है जो 11 से 41 डिग्री से. तापमान तक उगाया जा सकता है। इसकी अच्छी वृद्धि के लिए 31 डिग्री से. तापमान उपयुक्त पाई गई है। उष्ण दशाओं में इसका अंकुरण अच्छा होता है। प्रकाश और उष्ण ताप की अवस्था स्टीविया के पत्तों के बेहतर उत्पादन में सहायक होती है।

मिट्टी

दोमट या बलुई दोमट मिट्टी इसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त होती है इसकी अच्छी बढ़त के लिए 6.7 से 7.5 पी. एच. की अम्लीय से उदासीन भूमि उपयुक्त होती है। इसकी कृषि के

लिए क्षारीय भूमि का उपयोग नहीं करना चाहिए, क्योंकी यह पौधा लवण की उपस्थिति सहन नहीं करता।

फसलोत्पादन

इस पौधे की खेती के लिए बीजों के अंकुरण और तनों के रोपण, दोनों ही तरीकों का इस्तेमाल किया जा सकता है लेकिन चूंकि बीजों का अंकुरण बहुत कम होता है इसलिए सामान्यतः रोपण की विधि अधिक उपयुक्त कही जा सकती है। रोपण के लिए लगभग १० से 15 सें. मी. लंबाई के तने अच्छे माने जाते है। इस कार्य के लिए चालू वर्ष के पौधों से बेहतर परिणाम प्राप्त होते हैं। बुवाई से पूर्व जड़ों को उपचारित क्र लेना उचित होता है। उपचारण का अधिक प्रभाव उस समय देखने को मिलता है जब रोपण फरवरी दृ मार्च माह में किया जाता है।

रोपण का तरीका

स्टीविया को सामान्यतः मेड़ों में रोपा जाता है जिसमें कतार से कतार की दूरी 22 सें. मी. के मध्य होती है। पौधों के अच्छी तरह जमने के लिए रोपने के तत्काल बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिए।

पोषक तत्वों का प्रबंधन

खेत की तैयारी करते समय गहरी जुताई व कार्बनिक खादों का अच्छा मिश्रण करें । रासायनिक उर्वरक जैसे एन.पी.के की मात्रा 60:30:45 किग्रा प्रति हेक्टेयर देनी चाहिए। सूक्ष्म तत्वों जैसे बोरान और मैग्नीज के छिड़काव से भी पत्ते के उत्पाद में बढ़त मिलती है।

सिंचाई प्रबंधन

इसकी खेती के लिए पानी की अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है और ग्रीष्म ऋतु में नियमित सिंचाई जरूरी होती है। ग्रीष्म ऋतु में फसल की हर ८–10 दिन के अंतराल में सिंचाई करनी होती है।

फसल सुरक्षा

यह फसल में कीटों और बीमारियों से होने वाला नुक्सान बहुत कम पाया जाता है लेकिन कभी कभी इसमें बोरान की कमी का प्रभाव देखने को मिलता है, जिससे पत्तों में धब्बे आ जाते हैं। दो प्रतिशत की दर से बोरेक्स का छिड़काव देकर इस समस्या से निजात पाई जा सकती है।

पुष्पों की छंटाई

स्टेवियाऑक्साइड चूंकि पत्तों में होता है इसलिए पौधों की अच्छी बढ़त और प्रकाश संश्लेषकों के अधिक संग्रहण को सुविधा प्रदान करने के के उद्देश्य से इसके पुष्पों की छंटाई की जाती है पुष्पों की छंटाई पौधों के रोपण के 30,45,60, 75 एवं 85 दिनों के पश्चात् की जाती है। रेटून फसल होने की स्थिति में सामान्यतः पहली कटाई के 40 दिनों के पश्चात् पुष्प आते हैं अतः ऐसी स्थिति में छंटाई 40 और 55 वें दिन की जाती है।

कटाई एवं उपज

इसकी फसल रोपण के तीन माह पश्चात् पहली कटाई की अवस्था में आ जाती है। पुनरोउत्पादन को सहूलियत प्रदान करने के लिए पौधों को जमीन से 5–8 सें. मी. ऊँचाई से काटना चाहिए। नब्बे दिन के अन्तराल पर इसे पुनः काटा जा सकता है। एक वर्ष में इसकी चार बार कटाई की जा सकती है। उत्पादन प्रति हेक्टेयर प्रति फसल लगभग 3 से 3.5 टन पत्ते प्राप्त किए जा सकते हैं। इस प्रकार एक हेक्टेयर क्षेत्र से प्रति वर्ष लगभग 10 से 12 टन पत्ते प्राप्त किए जा सकते हैं।

शुष्क पुष्प उत्पादन

शुष्क पुष्प क्यों

- भारतीय और विदेशी बाजारों में शुष्क पुष्प की अच्छी माँग है। भारत से इसका निर्यात अमेरिका, जापान और यूरोप तक होता है।
- शुष्क पुष्प निर्यात में भारत दुनिया में पहले स्थान पर है, क्योंकि यहाँ कई प्रकार के पौधे पाये जाते हैं।
- शुष्क पुष्प से तात्पर्य केवल फूल से ही नहीं है, बल्कि इसके तहत शुष्क तना, बीज, कलियां आदि भी है।
- भारत से हर साल करीब एक सौ करोड़ रुपये मूल्य का शुष्क पुष् का निर्यात किया जाता है।यह उद्योग 20 देशों को पांच सौ से अधिक किस्म के शुष्क पुष्प का निर्यात करता है।
- इनका इस्तेमाल हस्त निर्मित कागज, लैंपशेड, मोमबत्ती स्टैंड, जूट के थैले, फोटो फ्रेम, बक्से, किताबें, दीवारों की सजावट, कार्ड और अन्य उपहार सामग्री के निर्माण में होता है। इन सामग्रियों के निर्माण में शुष्क पुष् के इस्तेमाल से उनकी खूबसूरती बढ़ जाती है।

शुष्क पुष्प निर्माण की तकनीक

शुष्क पुष्प उत्पादन के दो महत्वपूर्ण चरण है–

(क) सुखाना

(ख) रंगाई

फूलों के काटने व सुखाने का उचित समय

फूलों की काटाइ सुबह के समय पौधों पर से ओस की बूंदें सूखने के बाद करनी चाहिए। काटने के बाद उसे रबड़ बैंड की मदद से गुच्छे में रख दिया जाना चाहिए और जितनी जल्दी हो सके, धूप से हटा देनी चाहिए।

सूर्य की रोशनी में सुखाना

- सूर्य की रोशनी में सुखाने की तकनीक सबसे आसान और सस्ती है। लेकिन बारिश के मौसम में इस तकनीक से फूलों को नहीं सुखा सकते।
- फूलों के गुच्छों को रस्सियों या बाँस में उलटा लटकाकर सुखाया जाता है।
- इसमें किसी रसायन का इस्तेमाल नहीं होता। केवल अच्छी हवा की जरूरत पड़ती है।
- इस तरीके में फफूंद के हमले का खतरा सर्वाधिक होता है।

जमाकर सुखाना

- यह सूर्य की रोशनी में सुखाने की तकनीक से उन्नत तकनीक है।
- ज्माकर सुखाने के लिए आवश्यक यंत्र महंगे होते हैं। लेकिन इस तकनीक से सुखाये गये फूलों की गुणवत्ता अच्छी होती है और उनकी कीमत भी अधिक मिलती है।

दबाना

- इसमें सोख्ता कागज या साधारण कागज का इस्तेमाल किया जाता है।
- फूल सपाट हो जाते हैं और इस तकनीक से फूलों के क्षतिग्रस्त होने का खतरा अधिक होता है।

ग्लिसरीन तकनीक

- फूलों से नमी हटाने के बाद ग्लिसरीन भर दिया जाता है।
- इस तकनीक से उच्च गुणवत्तायुक्त उत्पाद हासिल होते हैं।

पॉलिसेट पॉलिमर

- पॉलिसेट पॉलिमर के छिड़काव से फूल सूख जाते हैं।
- इस तकनीक में सूखने का समय बहुत कम होता है।
- इससे अंतिम उत्पाद का रंग उन्नत होता है।

सिलिका सोख्ता

- सिलिका या सिलिका जेल का इस्तेमाल कर फूलों की गुणवत्ता बढ़ा सकते हैं और इससे फूल साबुत रहते हैं।
- इस तकनीक से बहुत जटिल फूल और पौधे सुखाये जाते हैं।

रंगाई

- शुष्क फूलों के लिए प्रोसियन रंग सर्वोत्तम होते हैं।
- चार किलोग्राम रंग का पाउडर लेकर उसे 20 लीटर पानी में मिलायें।
- इस घोल को आठ सौ लीटर गर्म पानी में मिला दें।
- इसमें दो लीटर एसीटिक एसिड मिला दें।
- बहुत नर्म फूलों का रंग सुधारने के लिए मैग्नेशियम क्लोराइड मिलायें।
- शुष्क फूलों को तब तक भिगोयें, जब तक उन पर रंग न चढ़ जाये।

फूल और पौधों के भाग

- इस वर्ग में बेला, चमेली, अमलताश, अड़हुल और नारियल के पत्ते आते हैं। इसमें सूखे पत्ते और तने भी शामिल हैं , जो भरने के काम आते हैं।
- भारत पिछले 20 साल से इनका निर्यात कर रहा है।

गुलदस्ता

- यह सुगंधित फूलों का मिश्रण है, जिसे पॉलिथिन बैग में रखा जाता है।
- इसे सामान्य तौर पर आलमीरा, दराज और बाथरूम में रखा जाता है।
- इस तकनीक में तीन सौ से अधिक किस्म के पौधों का इस्तेमाल होता है।
- सुगंधा, बेला, चमेली, गुलाब की पंखुडियां, बोगनवेलिया, नीम के पत्ते और कड़े फल भारत में आम तौर पर इस्तेमाल होते हैं।
- हमारा मुख्य ग्राहक ब्रिटेन है।

शुष्क पुष्प गमले

- इसमें सूखे हुए तने और डालियों का इस्तेमाल होता है।
- हालांकि बाजार में इसकी माँग काफी कम है, इसकी कीमत अधिक मिलती है और उच्च आय वर्ग के लोग इसे काफी पसंद करते हैं।
- इसमें सामान्य तौर पर इस्तेमाल होने वाली सामग्री में सूखे सूती कपड़े, सूखी मिरची, सूखे टिंडे, घास, चमेली, फर्न के पत्ते तथा अन्य शामिल हैं।

शुष्क पुष्प हस्तकला

- शुष्क पुष्प बाजार में यह नवीनतम विकास है।
- विभिन्न रंगों के शुष्क पुष्प से शुष्क पुष्प की फ्रेम जडित तसवीरें, बधाई कार्ड, कवर, पुष्पगुच्छ, मोमबत्ती स्टैंड, शीशे की कटोरी बनती है।

सीतापुर व अन्य जलग्रस्त क्षेत्रों में सुगन्धित खस की खेती

खस का इस्तेमाल सिर्फ ठंडक के लिए ही नही होता, आयुर्वेद जैसी परम्परागत चिकित्सा प्रणालियों में औषधि के रूप में भी होता है। यह जलन को शान्त करने और त्वचा सम्बन्धी विकारों को दूर करने में प्रयोग किया जाता है। खस भारत में प्राचीनकाल से ज्ञात है। खस यानी वेटीवर यह एक प्रकार की झाड़ीनुमा घास है, जो केरल व अन्य दक्षिण भारतीय प्रांतों में उगाई जाती है। वेटीवर तमिल शब्द है। दुनिया भर में यह घास अब इसी नाम से जानी जाती है। हालांकि उत्तरी और पश्चिमी भारत में इसके लिए खस शब्द का इस्तेमाल ही होता है। इस घास की ऊपर की पत्तियों को काट दिया जाता है और नीचे की जड़ से खस के परदे तैयार किए जाते हैं। बताते हैं कि इसके करीब 75 प्रभेद हैं, जिनमें भारत में वेटीवेरिया जाईजेनियोडीज अधिक उगाया जाता है।

भूमि संरक्षण :

खस का वैज्ञानिक नाम 'वेटिवर जिजेनिआयडीज' है, जिसका शाब्दिक अर्थ है, वेटिवर यानी ''जड़ जो खोदी जाए'' एवं जिजेनिआयडीज का अर्थ है नदी के किनारे। इस प्रकार यह पानी के किनारे मिलने वाली घास है। यह घास हरियाणा, उत्तरप्रदेश, राजस्थान, गुजरात, बिहार, उड़ीसा, मध्यप्रदेश एवं सम्पूर्ण दक्षिणी भारत में स्वजात उगती पाई जाती है।
राजस्थान के भरतपुर व अजमेर जिले में, उत्तरप्रदेश के इटावा, आगरा, देहरादून आदि क्षेत्रों में, छत्तीसगढ़ के बिलासपुर, मध्यप्रदेश के व कटनी इलाकों में, हरियाणा के हिसार, गुड़गांव, रोहतक व करनाल जिलों में व बिहार के घौटा नागपुर क्षेत्र में यह खूब पैदा होती है। इसकी दो जातियां पाई जाती हैं–

(1) जंगली जातिः जो उत्तर भारत में होती है तथा इसमें नियमित पुष्पन एवं बीजापन होता है तथा यह नियंत्रित न करने पर यहा खरपतवार के रूप में फैल जाती है।

(2) देशी या आन्तरिक जातिः यह दक्षिण भारत में होती है तथा इसमें पुष्पन व बीजान नहीं होता है। यह मुख्यतः मृदा अपरदन रोकने के काम आती है।

अनुकूल वातावरण

खस की अच्छी पैदावार की लिए शीतोष्ण एवं समशीतोष्ण जलवायु उपयुक्त रहती है। इसकी खेती उपजाऊ दोमट से लेकर अनुपजाऊ लेटराइट मिट्टियों में भी की जा सकती है। रेतीली दोमट मिट्टी जिसका पीएच मान 8.0 से 9.0 के मध्य हो, पर खस की खेती की जा सकती है। इसकी खेती ऐसे स्थानों में की जा सकती है, जहाँ वर्षा के दिनों में कुछ समय के लिए पानी इकट्ठा हो जाता है तथा अन्य कोई फसल लेना सम्भव नहीं होता है, खस की खेती एक विकल्प के रूप में की जा सकती है।में किसानों के लिये इसकी खेती लाभकारी सिद्ध हो सकती है।

फसल उत्पादन प्रौद्योगिकी

यह हर प्रकार की मिट्टी में पैदा होता है तथा यह घास 100–200 सेंटीमीटर वार्षिक वर्षा एवं 21 डिग्री सेंटीग्रेड से 45 डिग्री सेंटीग्रेड तक वाले क्षेत्रों में प्रचुर मात्रा में पैदा होती है। खस का प्रवर्धन बीज तथा स्लिप्स के द्वारा किया जा सकता है, लेकिन सामान्यतः व्यावसायिक खस का प्रवर्धन स्लिप के माध्यम से किया जाता है। स्लिप्स तैयार करने के लिए एक वर्ष पुराने पौधे अथवा पुरानी फसल के झुण्ड निकालकर उसमें से एक–एक कलम अलग कर ली जाती है, इन कलमों को स्लिप्स कहते हैं। स्लिप्स को तैयार करते समय हरी पत्तियों को काटकर अलग कर देना चाहिए, साथ ही नीचे की सूखी पत्तियों को एवं लम्बी जड़ों को काटकर अलग कर देना चाहिए, इनकी लम्बाई 15 से 20 सेंमी. रखनी चाहिए। खेत तैयार होने के तुरन्त बाद रोपाई प्रारम्भ कर देनी चाहिए। अधिक तेल का उत्पादन प्राप्त करने के लिए दक्षिण भारतीय परिस्थितियों में सिचाई की उपयुक्त व्यवस्था होने पर जनवरी से अप्रैल तक रोपाई की जा सकती है। रोपाई के तुरन्त बाद सिंचाई अतिआवश्यक है तथा असिंचित दशा में रोपण के लिए सबसे उपयुक्त समय मानसून की शुरुआत (जून से अगस्त) होता है। स्लिप्स को 8 से 10 सेंमी. की गहराई पर 60 सेंमी. पंक्ति की दूरी एवं 45 सेंमी. पौधे–से–पौधे की दूरी पर रोपित किया जाता है। एक हेक्टेयर क्षेत्रफल की रोपाई के लिए 38,000 से 40,000 स्लिप्स पर्याप्त रहती हैं।

कुछ उन्नतशील किस्में सीएसआईआर–सीमैप, लखनऊ द्वारा विकसित की गई हैं, जिनमें मुख्य प्रजातियाँ धारिणी, केएस.–1, केशरी, गुलाबी, सिम–वृद्धि, सीमैप खस–15, सीमैप खस–22 और सिम–समृद्धि हैं। ये प्रजातियां व्यावसायिक खेती में अपनी विभिन्न सुगन्धों के कारण उपयोग में लाई जाती है। इन प्रजातियों में अन्य प्रजातियों की तुलना में जड़ों का उत्पादन एवं तेल की मात्रा अधिक पाई जाती है।

फसल प्रबन्धन

खस के पौधों को समान्यतः अधिक पानी की आवश्यकता नहीं पड़ती है, हालांकि शुष्क क्षेत्रों में अधिक उपज प्राप्त करने के लिए 6 से 8 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। ऐसे क्षेत्रों में जहाँ वर्षा अच्छी होती है एवं साल भर नमी बनी रहती है, सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। खस की जड़ों का फैलाव अधिक होने के कारण अधिक मात्रा में पोषक तत्व मृदा से लेते हैं। इसीलिए खाद एवं उर्वरकों का उपयोग करने से तेल की उपज में वृद्धि होती है। खस की फसल में 120 किलोग्राम नाइट्रोजन, 60 किग्रा. फास्फोरस एवं 40 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष डालना चाहिए। खेत की तैयारी के समय फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी खुराक दी जाती है और बेहतर परिणाम के लिए 3 महीने के अन्तराल में नाइट्रोजन की खुराक 2 बराबर भागों में दी जाती है।

फसल सुरक्षा

खस की रोपाई के बाद खरपतवार–फसल प्रतिस्पर्धा के तहत 35–40 दिनों में खरपतवारों का नियंत्रण किया जाना चाहिए। खस का पौधा खेत में एक बार अच्छी तरह स्थापित हो गया तो फिर खेत में खरपतवारों की बढ़वार नहीं हो पाती है। खरपतवारों को समाप्त करने के लिए 2–3 बार निराई एवं गुड़ाई की आवश्यकता होती है। जिससे प्रकाश, नमी और पोषक तत्वों के लिए फसल के पौधों के साथ प्रतिस्पर्धा नहीं हो पाती है और उपज में वृद्धि होती है। खस की फसल पर रोग एवं कीट का प्रकोप कम देखा गया है, परन्तु खस की फसल पर कुछ कीटों एवं रोगों का बरसात के मौसम में देखने को मिलता है। खस की फसल में कभी–कभी लीफ–स्पॉट का आक्रमण देखने को मिलता है, इस प्रकार की बीमारियों से बहुत कम मात्रा में नुकसान होता है। कुछ कीट जैसे दीमक एवं स्केट कीट का प्रकोप रोपाई के तुरन्त बाद दिखाई पड़ता है। जिसकी रोकथाम के लिए मेलाथिऑन (0.2 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए तथा दीमक की रोकथाम के लिए 500–600 मिली. प्रति हेक्टेयर क्लोरोपायरीफॉस सिंचाई के पानी के साथ छिड़काव करने पर इन कीटों के प्रकोप पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

जड़ों की खुदाई

जड़ों की खुदाई रोपाई के 12.14 माह में करते हैं। जड़ों की खुदाई प्रारम्भ करने से पहले पौधे के जमीन से 35.40 सेंमी. ऊपरी भाग को काट दिया जाता है। जड़ों की खुदाई का सर्वोत्तम समय दिसम्बर होता है क्योंकि समय तेल की मात्रा जड़ों में अधिक पाई जाती है। जिन स्थानों पर ठंड अधिक होती है वहाँ पर जड़ों की खुदाई फरवरी माह में करना उचित रहता है। जड़ों की खुदाई करते समय खेत में हल्की नमी रहने से खुदाई में आसानी होती है। जड़ों की खुदाई ट्रैक्टर द्वारा मिट्टी पलटने वाले हल से 40.45 सेंमी. गहराई तक जड़ों की खुदाई सुविधापूर्वक की जा सकती है।

आसवन एवं तेल का भण्डारण

खस की जड़ों का सुगन्धित तेल का उत्पादन वाष्प आसवन द्वारा किया जाता है। इसकी जड़ों से सामान्यतः तेल निकालने के लिए 14–16 घंटे जड़ों का आसवन करना उपयुक्त रहता है। आसवन से पहले खस की जड़ों को छोटे–छोटे टुकड़ों में काट लेना चाहिए। जड़ों की खुदाई के तुरन्त बाद अथवा 1–2 महीने रखने के पश्चात भी तेल निकाला जा सकता है। खस के सुगन्धित तेल में नमी, हवा और सूर्य के प्रकाश का तेल की गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इसीलिए तेल को स्टील या एल्युमिनियम के हवा बंद पात्र में

एकत्र करके किसी छायादार स्थान पर सामान्य तापक्रम पर रखना चाहिए तथा तेल को जिस कंटेनर में रखा जाए वह स्वच्छ और जंग से मुक्त होना चाहिए।

रासायनिक संरचना एवं तेल की गुणवत्ता का मूल्यांकन

खस के सुगन्धित तेल की रासायनिक संरचना सबसे संयुक्त है और इसके सुगन्धित तेल में 50 से भी अधिक रासायनिक घटक पाए जाते हैं, जिनमें मुख्य रासायनिक घटक बेन्जोइक एसिड, वेटीविरोल, फुरफुरल और वीटोवोन हैं। खस के तेल की गुणवत्ता का निर्धारण भौतिक–रासायनिक गुणों रासायनिक रूपरेखा के माध्यम से किया जाता है।

उपज एवं कमाई

सिंचित व उपजाऊ मृदा अनुमानित लागत– 1,00,000 लाख रुपए (प्रति हेक्टेयर)
कुल उत्पादन से आय– 3,50,000–4,00,000 रुपए
शुद्ध मुनाफा– 2,50,000 से 3,00,000 रुपए (प्रति हेक्टयर)
भुसिंचित /नदी तटीय क्षेत्र /समयग्रस्त मृदा कुल उत्पादन से आय– 2,50,000–3,00,000 रुपए शुद्ध मुनाफा– 1,50,000 से 2,00,000 रुपए (प्रति हेक्टयर)

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें–
कृषि विज्ञान केन्द्र–द्वितीय, कटिया, सीतापुर, उ0प्र0

आलेख– आनन्द सिंह, सचिन प्रताप तोमर, दया शंकर श्रीवास्तव एवं शिशिर कान्त सिंह

सम्पादन एवं निर्देशन– शैलेन्द्र सिंह, वैज्ञानिक (कृषि प्रसार)

उत्प्रेरणा एवं सहयोग– सीड डिवीजन, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, नई दिल्ली, भारत सरकार

परियोजना– ग्रामीण महिला तकनीकी पार्क

प्रकाशक–कृषि विज्ञान केन्द्र–द्वितीय, कटिया, सीतापुर

मुद्रक– रामा प्रेस, सीतापुर

प्रकाशन संख्या– DST-RWTP/21-22/7